प्रथम अध्याय

तुलसीदास : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रथम अध्याय

तुलसीदास-व्यक्तित्व एवं कृतित्व

गोस्वामी तुलसीदास भक्तिकाल के श्रेष्ठ कवि, भक्त, सुधारक एवं लोकनायक हैं। वे मध्ययुगीन भारतीय साहित्याकाश के उज्ज्वलतम रत्न हैं। वे एक आदर्श महात्मा एवं प्रतिभा-सम्पन्न महाकवि हैं। वे उद्भट विद्वान् थे। संस्कृत, अवधि एवं ब्रजभाषा पर उनका समान अधिकार था। नाना पुराण निगमागम का उनका अध्ययन गहन था। वे अद्वितीय काव्य-कौशल के धनी थे। उनके जैसे प्रतिभाशाली कलाकार के हाथों निर्मित होकर रामकाव्य अपनी उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गया था। उनके परवर्ती रामकाव्य के रचयिता कवि उनके आलोक के सम्मुख फीके पड़ गये।

उनकी श्रेष्ठतम रचना 'रामचरितमानस' है जो हिन्दी साहित्य की ही नहीं; अपितु भारत के समस्त वाङ्मय की सर्वोत्तम कृति है। यह एक अनुपम निधि है, जो उनकी अनन्त भाव-राशि से ओतप्रोत है। यह एक महाकाव्य है, जिसमें जीवन-आदर्शों की निर्व्याज झाँकी, सांस्कृतिक मूल्यों का रमणीय कोष एवं जीवन-व्यापारों का वैविध्यपूर्ण चित्रण है। इसमें दर्शन-मत की शुष्कता एवं भक्ति की सरसता का समन्वय है।

किसी भी साहित्यकार की कृतियों का मूल्यांकन करने से पूर्व उसके व्यक्तिगत जीवन से परिचित होना आवश्यक है। तुलसी-साहित्य को हृदयंगम तभी किया जा सकता है, जब हम उनके व्यक्तित्व से परिचित हों।

जीवन-वृत्त :

प्राचीन सन्त, महात्मा और साहित्यकारों के व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्ध में असंदिग्ध सामग्री बहुत कम उपलब्ध है। इसका कारण यह है कि इन महापुरुषों को अपने ऐहिक जीवन का परिचय प्रकट करने में कोई रूचि नहीं थी। वे इसे शालीनता, मर्यादा और सिद्धान्त के विपरीत समझते थे। इसी कारण हमारे यहाँ लौकिक जीवन के इतिहास को कोई परम्परा नहीं मिलती। इनके जीवन-वृत्त को बहुत-कुछ अनुमान एवं जन-श्रुतियों के आधार पर निर्मित करना पड़ता है। गोस्वामी तुलसीदास का जीवन-वृत्त भी इसके लिये अपवाद नहीं है। उनका भी सम्पूर्ण रूप से प्रामाणिक जीवन-चरित्र अभी तक प्रस्तुत नहीं किया जा सका है।

जन्म-संवत् तथा जन्म-तिथि :

गोस्वामीजी ने अपनी जन्म-तिथि तथा जन्म-स्थान का कहीं उल्लेख नहीं किया है। इसलिये बहिर्साक्ष्यों के आधार पर इनकी जन्म-तिथि के सम्बन्ध में विद्वानों में बहुत मतभेद पाया जाता है :

१) बाबा वेणीमाधवदास, बाबू श्यामसुन्दरदास, हनुमानप्रसाद पोद्दार, शिवलाल पाठक एवं डा. भगीरथ मिश्र ने उनकी जन्म-तिथि संवत् १५५४ मानी है।

२) पण्डित रामगुलाम द्विवेदी, तुलसी साहिब, डा. ग्रियर्सन, डा. राजाराम रस्तोगी एवं डा. माताप्रसाद गुप्त ने संवत् १५८९ को ग्राह्य माना है।

३) ठाकुर शिवसिंह सेंगर ने संवत् १५८३ को तथा विल्सन ने संवत् १६०० को मान्यता दी है।

इस प्रकार तुलसीदास के जन्म-काल के सम्बन्ध में दो मत रह जाते हैं- सं १५५४ तथा १५८९। सर्वाधिक प्रमाणों के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि संवत् १५८९ ही गोस्वामीजी का अपेक्षाकृत अधिक संभावित जन्म-काल है।

जन्म - स्थान :

तुलसीदास के जन्म-स्थान को लेकर भी विद्वानों में मतभेद है। विल्सन ने हाजीपुर को तथा डा. ग्रियर्सन ने तारी को तुलसी का जन्म-स्थान माना है। रामरसरंगमणिजी ने 'कवित्त-रामायण' की टीका में तारी का समर्थन किया है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हनुमानप्रसाद पोद्दार एवं पं. रामबहोरी शुक्ल राजापुर को तुलसीदास का जन्म-स्थान मानते हैं। कुछ विद्वान् हस्तिनापुर को तो कुछ सोरों को उनका जन्म-स्थान मानते हैं।

अंन्त: साक्ष्य एवं बहिर्साक्ष्य के आधार पर अधिकतर विद्वान राजापुर को ही तुलसीदास का जन्म-स्थान मानने के पक्ष में है।

तुलसी का नाम :

इनके बचपन का नाम रामबोला था। जन-श्रुतियों एवं कतिपय जीवनियों के अनुसार जन्म के समय तुलसीदास रोये नहीं; किन्तु इनके मुख से 'राम' का शब्द निकला था। इसीसे इनका नाम रामबोला पड़ गया था। उन्होंने इस नाम का उल्लेख अपनी रचनाओं में किया है।

साहिब सुजान जिन स्वान हू को पच्छ कियो,
राम बोला नाम, हौं गुलाम राम साहि कौ। [1]

राम को गुलाम नाम रामबोला राख्यो राम,
काम यहै, नाम द्वै हौ कबहूँ कहत हौं। [2]

यह 'रामबोला' नाम ही बाद में तुलसीदास के रूप में परिणित हो गया था।

नाम तुलसी पै भोंडो भाँग ते कहायो दास,
कियो अंगीकार ऐसे बड़े दगाबाज को। 3

केहि गिनती मह गिनती जस बन घास।
राम जपत भए तुलसी तुलसीदास॥ 4

तुलसी का बाल्य-काल :

गोस्वामीजी का जन्म अभुक्त मूल नक्षत्र में हुआ था इसलिये या तो अमंगल की आशंका से माता-पिता ने उन्हें त्याग दिया था या उनकी अकाल मृत्यु हो गई थी :

मातु पिता जग जाय तज्यो,
बिधि हू न लिखी कछु भाल भलाई।
नीच, निरादर-भाजन, कादर,
कूकर टूकन लागि ललाई॥ 5

माता ने उनको चुनियाँ नामक दासी को सौंप दिया था जिसने बड़े प्रेम से उनका पालन-पोषण किया था। लेकिन जब तुलसीदास लगभग पाँच वर्ष के हुये तब चुनियाँ का भी देहान्त हो गया। अब तो तुलसीदास अनाथ हो गये। गोस्वामीजी ने अपनी दीन-हीन दशा का हृदय-विदारक उल्लेख अपनी कृतियों में किया है :

टूकनि को घर घर डोलत कंगाल बोलि,
बाल ज्यों कृपाल नतपाल पालि पोसो है। 6

बालपने सूधे मन राम सनमुख भयो,
राम नाम लेत माँगि खात टूक टाक हौं। 7

तुलसी के माता - पिता :

तुलसीदास की माता का नाम हुलसी था।

रामहि प्रिय पावनि तुलसी सी।
तुलसिदास हित हियँ हुलसी सी॥ 8

वह दोहा भी, जिसका पूर्वार्ध गोस्वामीजी और उत्तरार्ध रहीम का रचा हुआ माना जाता है, श्लेष के आधार पर हुलसी नाम की पुष्टि करता है :

सुरतिय, नरतिय, नागतिय, सब चाहत अस होय।
गोद लिये हुलसी फिरैं, तुलसी सो सुत होय॥

इनके पिता का नाम आत्माराम दूबे था जो सरयू पारीण ब्राम्हण थे।

तुलसी का कुल एवं जाति :

अन्तः साक्ष्य के अनुसार उनका जन्म ब्राम्हण परिवार में हुआ था :

जायो कुल मंगन, बधावनों बजायो सुनि,
भयो परिताप पाप जननी जनक को॥ [9]

वे सरयू पारीण थे और उनका जन्म उच्च ब्राम्हण कुल में हुआ था :

दियो सुकुल जनम, शरीर सुन्दर, हेतु जो फल चारि को।
जो पाई पण्डित परम पद, पावत पुरारि मुरारि को॥ [10]

कुछ विद्वान् इस 'सुकुल' शब्द के आधार पर उनका गोत्र 'शुक्ल' मानते हैं।

तुलसी के गुरू :

जन-श्रुतियों एवं अन्तः साक्ष्य के अनुसार उनके गुरू का नाम नरहरिदास था :

बंदऊँ गुरू पद कंज, कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज, जासु बचन रवि कर निकर॥ [11]

उन्होंने अपने गुरू से सूकर खेत (वराह-क्षेत्र जो सरयू-घाघरा के संगम पर गोंडा जनपद में स्थित है) में राम-कथा सुनी थी :

मैं पुनि निज गुर सन सुनी, कथा सो सूकरखेत।
समुझी नहिं तसि बालपन, तब अति रहेऊँ अचेत॥ [12]

बाद में उन्होंने काशी के उद्भट विद्वान् शेष सनातनजी के सानिध्य में बैठ कर पन्द्रह साल तक 'नाना पुराण निगमागम' का गहन अध्ययन किया था।

विवाहित जीवन तथा वैराग्य :

अन्तः साक्ष्य से यह सिद्ध होता है कि तुलसीदास ने विवाह किया था और वे अपनी पत्नी पर अत्यधिक आसक्त थे :

लरिकाई बीती अचेत चित, चंचलता चौगुने चाय।
जोबन-जुर जुबती-कुपथ्य करि, भयो त्रिदोष, भरि मदन-बाय॥ [13]

पर्‌यो लोकरीति में पुनीत प्रीती रामराय,
मोहबस बैठो तोरि तरकितराक हौं। [14]

उनकी पत्नी का नाम रत्नावली था और उसके उपदेश से ही वे गृहस्थ-वेष का परित्याग करके विरक्त साधु हो गये थे। उन्होंने स्वयं कहा है :

"हम तो चाखा प्रेम रस, पत्नी के उपदेश।"

तीर्थ-यात्रा तथा पर्यटन :

उन्होंने परिव्राजक के रूप में तीर्थाटन एवं सत्संग करते हुये सम्पूर्ण भारतवर्ष का भ्रमण किया था। अयोध्या तथा चित्रकूट उन्हें विशेष प्रिय थे। उनके जीवन का उत्तरार्ध काशी में व्यतीत हुआ था।

वृद्धावस्था एवं अवसान-काल :

अन्त: साक्ष्य के अनुसार गोस्वामीजी को वृद्धावस्था में असह्य वेदना का सामना करना पड़ा था। पीड़ा के निवारण के लिये इन्होंने शंकर, राम और हनुमान की प्रार्थना की थी। हनुमान बाहुक के ४४ छन्द तो इन्होंने पीड़ा-निवारणार्थ ही लिखे थे :

रोग भयौ भूत सो, कुसूत भयो तुलसी को,
भूतनाथ पाहि पद पंकज गहतु हौं। [15]

इस भयंकर पीड़ा के समय भी उनका राम में विश्वास अडिग रहा और उन्होंने इस पीड़ा का कारण अपना भाग्य ही माना।

अन्त में, अपना अन्तिम समय निकट देख कर वे भगवान से प्रार्थना करते हैं कि 'जहाँ भी मैं जन्म लूँ वहाँ आपसे मेरे स्नेह का सम्बन्ध बना रहे' और अपना शरीर त्याग देते हैं :

काल विलोकि कहै 'तुलसी' मन में प्रभु की परितीति अघाई।
जन्म जहाँ तहँ रावरे सों निन्है भरि देह स्नेह सगाई॥ [16]

'मूल गोसाईं चरित्र' में उनकी निधन-तिथि सम्बन्धी दोहा इस प्रकार हैं :

संवत सोलह सौ असी, असी गंग के तीर।
सावन स्यामा तीज सनि, तुलसी तज्यो सरीर॥

गणना के अनुसार यही तिथि ठीक बैठती है और इसी दिन गोस्वामीजी के मित्र टोडरमल के वंशज उनकी पुण्य-तिथि मनाते हैं एवं सीधा (भोजन-सामग्री) देते हैं। इस प्रकार संवत् १६८० श्रावण कृष्ण तृतीया शनिवार को असीघाट पर गोस्वामीजी ने अपना पार्थिव शरीर त्याग दिया।

अन्तिम समय तक उनकी वाणी से कविता का अजस्र प्रवाह प्रस्रवित होता रहा और उनकी मृत्यु राम का यश वर्णन करते हुये ही हुई :

राम नाम जस बरनि कै भयो चहत अब मौन।
तुलसी के मुख दीजिये अब ही तुलसी सोन॥

तुलसी का व्यक्तित्व :

किसी भी व्यक्ति के निर्माण में समसामयिक परिस्थितियों एवं विचार धाराओं का योगदान रहता है। कवि किसी परिस्थिति-विशेष से संस्कार ग्रहण करके अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता है ओर अपनी प्रतिभा से युग को प्रभावित एवं परिष्कृत करता है। लेकिन गोस्वामीजी के जीवन की परिस्थितियाँ पूर्णतया उनके प्रतिकूल थी। उनको जन्म से ही तिरस्कार, अपमान एवं आर्थिक संकटों का सामना करना पड़ा था। उनका बाल्यकाल अत्यन्त कष्टमय था। माता-पिता-विहीन बालक तुलसी को निराश्रित होकर घर-घर टूक माँग कर पेट भरना पड़ता था।

उसी समय उन्हें गुरु नरहरिदास का आश्रय प्राप्त हुआ। गुरु ने इन्हें राम-कथा सुनाई और राम नाम का मन्त्र दिया। जीवन के थपेड़ों ने जहाँ उनके स्वभाव में दीनता, विनम्रता, उदारता एवं परोपकार की भावना भर दी थी वहीं राम नाम के सबल आधार ने इसको निर्भीक एवं आत्म-विश्वासी बना दिया था। जीवन-संघर्ष ने इनके व्यक्तित्व को तपा कर कुंदन बना दिया था।

दास्य-भाव की भक्ति :

भगवान् के गुण, तत्त्व, रहस्य और प्रभाव को जान कर श्रद्धा एवं प्रेम पूर्वक उनकी सेवा करना और उनकी आज्ञा का पालन करना दास्य-भक्ति है।[17]

तुलसीदास ने भी अपने बाल्यकाल के उत्पीड़न एवं अगणित आपदाओं के कारण इसी दास्य-भाव को अपना कर राम के सबल आधार का आश्रय लिया। उन्होंने राम से स्पष्ट कहा कि मेरा कहीं कोई नहीं है, मैं आपका गुलाम होना चाहता हूँ :

बूझ्यौ जोंहि, कहयो मैं हूँ चेरो ह्वै हौं रावरो जू,
मेरो कोऊ कहूँ नाहिं, चरण गहत हौं। [18]

राम बोला नाम, हौं गुलाम राम साहि को। [19]

ओर राम जैसे समर्थ स्वामी को प्राप्त करके गोस्वामीजी निश्चिन्त हो गयो :

सोवै सुख 'तुलसी' भरोसे एक राम के। [20]

गोस्वामीजी की मान्यता थी कि राम ने दास, भक्तों के लिये ही मनुष्य शरीर धारण किया हैं :

अज, अद्वैत, अनाम, अलख रूप-गुण-रहित जो,
मायापति सोइ राम, दास हेतु नर-तनु धरेउ। [21]

दास्य-भाव की भक्ति में दृढ, आस्था के कारण उन्होंने यहाँ तक कहा कि :

सेवक सेब्य भाव बिनु, भव न तरिअ उरगारि।
भजहु राम पद पंकज, अस सिद्धान्त बिचारि। 22

तुलसी की अनन्यता :

नारद भक्ति-सूत्र के अनुसार अपने प्रियतम भगवान् को छोड कर दूसरे आश्रयों के त्याग का नाम अनन्यता है :

अन्याश्रयाणां त्यागोऽनन्यता। 23

अपने इष्टदेव के प्रति यह अनन्यता ही गोस्वामीजी की साधना का सम्बल, विचारों का मेरूदण्ड एवं भावों का उद्‌गम है। उन्होंने अपने ग्रन्थों में जगह-जगह अनन्यता का भाव प्रकट किया हैं :

एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास।
रामरूप स्वाती जलद, चातक तुलसीदास॥ 24

वे स्पष्ट कहते हैं कि 'हे नाथ! आपके चरणों को छोड़कर और कहाँ जाऊँ?' :

जाउँ कहाँ तजि चरण तुम्हारे। 25

उनका विश्वास है कि भगवान् को वही सेवक प्रिय है, जो उनके प्रति अनन्यगति होता है :

समदरसी मोहि कह सब कोऊ।
सेवक प्रिय अनन्यगति सोऊ॥ 26

यद्यपि उन्होंने गणेश, शिव, देवी आदि अन्य देवताओं का भी यशोगान किया है, तथापि अपने आराध्य स्वामी के चरणों में अनन्य भक्ति की ही उन्होंने याचना की है :

माँगत तुलसिदास कर जोरे।
बसहिं रामसिय मानस मोरे॥ 27

दैन्य :

अनन्यता ने ही तुलसी को दीनता तथा विनम्रता का श्लाघ्य गुण दिया है। उनकी रचनाओं में दैन्य और विनम्रता की सर्वत्र अभिव्यक्ति हुई है :

राम-सों बड़ो है कौन, मो-सों कौन छोटो।
राम सों खरो है कौन, मो-सों कौन खोटो॥ 28

वे उद्‌भट विद्वान् हैं, निष्णात पण्डित हैं और काव्य-शास्त्र के मर्मज्ञ हैं, लेकिन उनके विनम्र कथन दृष्टव्य हैं :

कबिन होउँ, नहिं बचन प्रवीनू।
सकल कला सब बिद्या हीनू॥ 29

कबित बिबेक एक नहिं मोरें।
सत्य कहउँ लिखि कागद कोरें॥ 30

कहँ रघुपति के चरित अपारा।
कहँ मति मोरि निरत संसारा॥ 31

ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि राम-भगति सुर सरिता, आस करत ओसकन की। 32

यह विनम्रता ही उनके व्यक्तित्व की परमनिधि है, जिसके बल पर वे अपने जीवन की विकट से विकट परिस्थिति का सामना सफलता से कर पाते हैं।

स्वान्तः सुखाय रचना :

गोस्वामीजी ने अपना काव्य स्वान्तः सुखाय लिखा था। उन्होंने इसका स्पष्ट उल्लेख 'रामचरितमानस' के प्रारम्भ में किया है :

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा
भाषा निबन्धमति मंजुल मातनोति। 33

लेकिन उनकी 'स्वान्तः सुखाय' रचनायें 'जन-हिताय' थीं। उन्होंने अपने काव्य का सृजन लोक-हित के लिये ही किया था :

कीरति भणिति भूति भलि सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥ 34

इसलिये उन्होंने किसी प्राकृत (सांसारिक) जन का गुणगान करने में अपनी प्रतिभा का अपव्यय न करके जन-कल्याण के लिये ही उसे सार्थक किया था :

कीन्हें प्राकृतजन गुन गाना।
सिर धुनि गिरा लगत पछिताना॥ 35

उनके आश्रयदाता कोई लौकिक राजा नहीं वरन् स्वयं मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम हैं, जिनके प्रति उनकी अनन्य भक्ति थी। वह भक्ति किसी अर्थ-लाभ अथवा वैभव-लिप्सा के गन्ध से दूषित न थी।

उदारशीला समन्वय-बुद्धि :

गोस्वामीजी के व्यक्तित्व का एक और महत्त्वपूर्ण तत्त्व है समन्वय। उनका समस्त काव्य समन्वय की विराट् चेष्टा है। उनके व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व में समन्वय की अजस्र धारा बहती है :

भगति ज्ञानहि नहिं कछु भेदा।
उभय हरहिं भव संभव खेदा॥

सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा।
गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा॥

शिव द्रोही मम भगत कहावा।
सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा॥ [36]

संकरप्रिय मम द्रोही, सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि, घोर नरक महुँबास॥ [37]

गोस्वामीजी ने अपने गंभीर और प्रत्यक्ष अनुभव तथा सूक्ष्म-निरीक्षण शक्ति और तलस्पर्शी अनुशीलन के आधार पर मानस के रूप में सभी प्रकार के पक्षों और विचारों का समन्वय किया है। उनकी समन्वय साधना-बहुमुखी थी। उन्होंने भाषा और संस्कृत, निर्गुण और सगुण, द्वैत और अद्वैत, माया और प्रकृति, कर्म, ज्ञान और भक्ति, भाग्य और पुरुषार्थ, जीव के भेद और अभेद, वैष्णव और शैव, मानवतावाद और वर्णाश्रम-धर्म, चाण्डाल और ब्राह्मण, व्यक्ति और समाज, व्यक्ति और परिवार, साधुमत और लोकमत, वेदशास्त्र और व्यवहार, भोग और त्याग, राजा और प्रजा, काव्य और मोक्ष-शास्त्र, तथा रामोपासना और कृष्णोपासना का समन्वय किया है। इसके अतिरिक्त त्रिविध संस्कृतियों, कविता के मानदण्डों, काव्य-रचना की विविध शैलियों और भावपक्ष तथा कलापक्ष का भी सुन्दर समन्वय किया है।

इस समन्वय के कारण ही वे लोकनायक हो गये थे। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में कहा जा सकता है, "लोकनायक वही हो सकता है, जो समन्वय कर सके, क्योंकि भारतीय जनता में नाना प्रकार की परस्पर विरोधिनी संस्कृतियाँ , साधनायें, जातियाँ, आचार-निष्ठा और विचार पद्धतियाँ प्रचलित हैं। बुद्धदेव समन्वयकारी थे, गीता में समन्वय की चेष्टा है और तुलसीदास भी समन्वयकारी थे।" [38]

तुलसी का स्वाध्याय एवं विद्वत्ता :

गोस्वामीजी ने पन्द्रह वर्ष तक शेष सनातनजी जैसे दिग्गज विद्वान के सानिध्य में बैठकर नाना पुराण निगमागम आदि का अध्ययन किया था। इस गहन अध्ययन-मनन

ने उन्हें अगाध पाण्डित्य, सूक्ष्म दृष्टि तथा गंभीर विचार शक्ति प्रदान कर दी थी। अपने इस निष्णात पांडित्य, व्यापक अनुभव एवं समर्थ अभिव्यंजना-शक्ति के द्वारा न केवल उन्होंने 'मानस' जैसे धर्म कोष का सृजन किया वरन् भारतीय संस्कृति की मार्मिक व्याख्या भी की है।

गोस्वामीजी साहित्य के महान् प्रकाण्ड पाण्डित थे। संस्कृत, अवधी और ब्रज भाषा पर उनका समान रूप से अधिकार था।

युग-प्रवर्तक तुलसी :

गोस्वामीजी क्रान्तिकारी युग-प्रवर्तक थे। उनका व्यक्तित्व महान् एवं विविध गुणों का संगम था। उनके जीवन की परिस्थितियों ने उनके निर्माण में कोई योगदान नहीं दिया वरन् उन्होंने अपनी क्षमता, श्रम एवं प्रतिभा से अपने व्यक्तित्व का विकास किया था। उन्होंने समाज के नाना स्तरों का जीवन भोगा था। वे स्वयं गृहस्थ-जीवन की निम्न कोटि की आसक्ति का शिकार रह चुके थे। उन्होंने सामान्य जनता के दु:खों, कष्टों और समस्याओं को निकट से देखा था तथा उनका अनुभव भी किया था। अत: उन्होंने समाज में चैतन्य एवं जागृति के निर्माण का बीड़ा उठाया।

वे समाज के सजग प्रहरी थे। उन्होंने समाज-सुधार के पावन उद्देश्य से राम भक्ति की सुरसरि प्रवाहित की और कायरता, निराशा, आत्महीनता आदि की भावनाओं को मिटाकर साहस का संचार किया। तत्कालीन समाज का मानसिक स्तर ज्ञान की उपादेयता को समझने में असमर्थ था, इसलिये उन्होंने भक्ति की पावनधारा से समाज को संजीवन शक्ति प्रदान की।

भक्ति ही उनके समस्त साहित्य का मूलाधार है। इसीके आधारपर उन्होंने धर्म का उपदेश दिया, साहित्य का सृजन किया, जीवन के मार्मिक तथ्यों का निरूपण किया और समाज और लोक के आदर्श की स्थापना की। वे राम-मार्गी थे। उन्होंने इसके अतिरिक्त किसी मार्ग का अनुसरण नहीं किया।

अन्त में बेनी कवि के शब्दों में कहा जा सकता है कि गोस्वामीजी ने रामायण गा कर लोगों को भारी भवसागर के पार उतार दिया:

भारी भवसागर उतारतो कवन पार,
जो पै यह रामायन तुलसी न गावतो।

और स्वयं भी राम-नाम की नौका से भवसागर को पार कर गये।

तुलसी की काव्य-कृतियाँ :

गोस्वामीजी ने कौन-कौन से ग्रन्थों की रचना की थी, इस सम्बन्ध में अन्त: साक्ष्य मौन है। उनकी किसी भी रचना में उनकी अन्य रचनाओं का उल्लेख या संकेत भी नहीं मिलता है। अत: बाह्य-साक्ष्य का ही सहारा लेना पड़ता है; परन्तु उनकी रचनाओं में 'तुलसी' नाम की छाप मिलती है, जो उनके द्वारा रचित होने का प्रमाण है। हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों एवं विद्वानों ने गोस्वामीजी के बारह ग्रन्थ ही प्रामाणिक माने हैं। इनके अतिरिक्त 'हनुमान बाहुक' एवं 'हनुमान चालीसा' की प्रामाणिक रचनाएँ मानी गयी हैं। डा. भगीरथप्रसाद दीक्षित ने सतसई एवं 'कुण्डलियाँ रामायण' को भी प्रामाणिक माना है :

१) रामलला नहछू :

यह गोस्वामीजी की लोकगीत के रूप में लिखी हुई अवधी रचना है। इसमें सोहर छन्द है, जो विवाह के अवसर पर गाये जाते हैं। संभवत: उस समय विवाह के अवसर पर फूहड़ गीतों का प्रचलन रहा हो, अत: उन्होंने जन-रुचि परिष्कार हेतु, रामकथा का आधार लेकर इसकी रचना की है। इसमें लोक प्रचलित रसिकता एवं श्रृंगारिकता को स्थान दिया गया है। यह उनकी प्रारम्भिक रचना है, जिसका स्तर अन्य रचनाओं से निम्न है।

२) वैराग्य संदीपनी :

यह वैरागियों और साधु-संन्यासियों के लिये लिखी गई रचना है, जिसमें सत्-संगति एवं वैराग्य से भक्ति प्राप्त करने का उपदेश दिया गया है। यह ब्रजभाषा में लिखा हुआ छोटा सा ग्रन्थ है, जो अपने आप में पूर्ण है। इसमें कुल ६२ छन्द (दोहे, चौपाई, सोरठे) हैं। इसमें तीन प्रकाश हैं। पहले ७ छन्दों में मंगलाचरण, श्रीराम की वन्दना, उनके स्वरूप का वर्णन एवं इस ग्रन्थ की प्रशंसा है। फिर २६ छन्दों में 'संत स्वभाव वर्णन रूप' प्रथम प्रकाश है। द्वितीय प्रकाश 'सन्त-महिमा वर्णन' ९ छन्दोंका है। तृतीय प्रकाश 'शान्ति-वर्णन' २० छन्दों का है।

इसमें भक्ति को कुलीनता से श्रेष्ठ माना गया है :

तुलसी भगत सुपच भलौ, भजै रैन दिन राम।
ऊँचो कुल केहि काम को, जहाँ न हरि को नाम॥ [39]

जदपि साधु सब ही बिधि हीना।
तद्यपि समता के न कुलीना॥ [40]

३) बरवै रामायण :

यह समय-समय पर लिखे गये बरवै छन्दों का संकलन है। बरवै अवधी का एक ललित छन्द है, जिसका सम्बन्ध कवि रहीम से जोड़ा जाता है। बरवै रामायण की रचना बाबा वेनीमाधवदास के अनुसार सं. १६६९ में की गई थी। यह सात काण्डों में विभक्त है और इसमें कुल ६९ छन्द हैं।

इसमें कोई प्रबन्ध नहीं है और न कथानक योजना ही है। यह कलात्मक सौन्दर्य से ओतप्रोत है। इसमें कई छन्द ऐसे भी हैं, जो गोस्वामीजी की लघुता एवं राम नाम की महिमा का बखान करते हैं:

केहि गिनती मह गिनती जस बन घास।
राम जपत भये तुलसी तुलसीदास॥ [41]

बरवै रामायण या बरवा रामायण के नाम से दो छपे ग्रन्थ मिलते हैं। दोनों ही गोस्वामीजी द्वारा रचित माने जाते हैं, यद्यपि दोनों की रचना में पर्याप्त अन्तर दृष्टिगोचर होता है। जो 'बरवै रामायण' काशी नागरी प्रचारिणी द्वारा छपी 'तुलसी ग्रन्थावली' में दी गई है, वही सर्वसाधारण में प्रचलित है और वही प्रामाणिक रूप में स्वीकार की जाती है।

४) पार्वती-मंगल :

यह अवधी भाषा में रचित खण्डकाव्य है जिसमें १६४ छन्द हैं। इसमें मंगल और हरिगीतिका छन्दों का प्रयोग हुआ है। इसकी रचना विवाहोत्सवादि मंगल कार्यों के समय महिलाओं के गायन हेतु की गई है।

कल्याण काज उछाह ब्याह सनेह सहित जो गाइ है।
तुलसी उमा शंकर प्रसाद प्रमोद मन प्रिय पाइ है॥ [42]

यह कुमार-संभव के आधार पर लिखा हुआ है और इसमें शिव-पार्वती के परिणय प्रसंग का सरस चित्रण किया गया है। इसमें शिव-बरात का वर्णन अत्यंत मधुर है एवं विदाई का प्रसंग मार्मिक।

५) जानकी-मंगल :

यह अवधी में रचित एक खण्डकाव्य है, जिसमें २१६ छन्द हैं। इसके एवं पार्वती मंगल के उद्देश्य तथा शैली में साम्य दिखाई देता है। इसमें राम-जानकी के मंगलमय विवाहोत्सव का मधुर, सरस एवं सजीव वर्णन किया गया है। इसका उद्देश्य वैवाहिक-मांगलिक कार्यों का वर्णन है इसीसे इसका नाम भी मंगल रखा गया है। इसमें लोक संस्कृति,

रीति-रिवाज और विश्वासों का चित्रण किया गया है।

देहि गारि बर नारि नाम लै दुहु दिसि।
जेंवत बढयो अनंद सुहावनि सो निसि॥ [43]

इसके कथानक पर 'वाल्मीकि रामायण' का प्रभाव है।

६) रामाज्ञा-प्रश्न :

इसकी रचना मंगल और शकुन के निर्णय के लिये सम्वत् १६२१ में हुई है।

गोस्वामीजी ने इसकी रचना प्रह्लाद घाट पर रहने वाले अपने ज्योतिषी मित्र गंगाराम को सम्बोधित करते हुये की है:

सगुन प्रथम उनचास सुभ, तुलसी अति अभिराम।
सब प्रसन्न सुर भूमिसुर, गोगन गंगाराम॥

'रामाज्ञा-प्रश्न' की कथा पर 'वाल्मीकि-रामायण' की कथा का प्रभाव अधिक है।

७) दोहावली :

यह ब्रज भाषा की शुद्ध मुक्तक रचना है, जिसका एक दोहा दूसरे दोहे से तारतम्य रूप में बद्ध नहीं है। इसमें व्यक्ति, समाज, धर्म और राजनीति के सुन्दर प्रसंगों का समावेश किया गया है। इसका प्रमुख उद्देश्य नीति-निरूपण है।

तुलसी पावस के समय, धरी कोकिलन मौन।
अब तो दादुर बोलि हैं, हमें पूछि है कौन॥ [44]

इसमें भक्ति सम्बन्धी दोहों की भी बहुलता है। चातक के प्रतीक रूप से भक्ति के आदर्श रूप का चित्रण किया गया है। यह विविध ज्ञान का संगम है।

८) कवितावली :

यह ब्रजभाषा में रचित सरस, मधुर और ओज पूर्ण छन्दों का संग्रह है। यह क्रमबद्ध रूप से रचित एक प्रबन्ध ग्रन्थ नहीं है। इसमें विभिन्न समयों एवं स्थानों पर लिखे गये कवित्त, सवैया आदि ललित छन्दों का काण्ड के अनुसार संयोजन किया गया है। उत्तरकाण्ड में प्रयाग, चित्रकूट सीताबट आदि का अप्रासंगिक वर्णन भी है, जिससे यह सिद्ध होता है कि गोस्वामीजी ने उन्हीं स्थानों पर इन छन्दों की रचना की थी।

इसमें कलियुग का भी वर्णन है, जो वास्तव में तत्कालीन जनता की दशा का

यथार्थ चित्रण है।

खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।
जीविका-विहीन लोग सीद्यमान सोचबस,
कहैं एक एकन सों कहाँ जाई, का करी।। [45]

अकाल के समय होनेवाली त्राहि-त्राहि तथा हाहाकार का भी उन्होंने हृदय-विदारक वर्णन किया है। इसमें महामारी, रूद्रबीसी, मीन की सनीचरी, काशी की दुर्दशा आदि का वर्णन भी किया है। उनके आत्म-चरितात्मक संकेत भी मिलते हैं कि किस प्रकार वे चार चनों को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष जैसे चार फल मानते थे :

बारे तें ललात बिललात द्वार-द्वार दीन,
जानत हौं चारि फल चारि ही चनक को।। [46]

इस प्रकार 'कवितावाली' में राम की पृष्ठ भूमि में व्यक्ति और समाज का चित्रण किया गया है।

९) हनुमान बाहुक :

संवत् १६६४ के लगभग गोस्वामीजी की बाहुओं में वात-व्याधि की भयंकर पीड़ा उत्पन्न हुई थी और फोड़े-फुन्सियों के कारण उनका सारा शरीर वेदनामय हो गया था।

तातें तनु पेषियत घोर बरतोर मिस,
फूटि फूटि निकसत लोन रामराय को।। [47]

औषध, मंत्र, त्रोटक आदि अनेक उपचार किये गये; किन्तु कष्ट घटने के बजाय दिनों-दिन बढ़ता ही गया। अन्त में असहनीय कष्टों से हताश होकर उन्होंने हनुमानजी की वन्दना ४४ पद्यों के स्तोत्र के रूप में की, जो हनुमान-बाहुक के नाम से प्रसिद्ध है। इसके तीव्र भाव प्रकाशन से यही लगता है कि इसकी रचना बाहु-पीड़ा से व्यथितावस्था में ही की गई है। इसकी शैली प्रौढ़ है तथा साहित्यिक उत्कृष्टता से परिपूर्ण है।

१०) गीतावली :

यह ब्रज भाषा की एक ललित, सरस, प्रौढ़ रचना है, जिसमें श्रृंगार, हास्य, वीर, करुण, वात्सल्य आदि रसों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। इसमें श्रृंगार के दोनों पक्षों तथा वीर और करुण के चित्र तो मन को मुग्ध कर लेनेवाले हैं। यह गेय है तथा स्त्री-सुलभ कोमल भावनाओं का वर्णन करने वाला यह काव्य महिला-समाज के लिये रचा गया है।

सहेली सुनु सोहिलो रे!
सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो सब जग आज।
पूत सपूत कौसिला जायो, अचल भयो कुल-राज॥ 48

इसमें स्त्री-समाज में प्रचलित विश्वास, टोना-टोटका, बाल-लीला, प्रेम-प्रसंग आदि का विशद वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त भरत-मिलाप, जटायु-उद्धार, विभीषण शरणागति, सीता की वियोग-व्यथा आदि करूण भावों का मर्मस्पर्शी वर्णन किया गया है। साथ ही इसमें होली तथा राम-हिंडोला आदि का सुललित चित्रण मिलता है, जिस पर कृष्ण काव्य का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

आली री! राघो के रूचिर हिंडोलना झूलन जैए॥ 49

मर्यादा पुरुषोत्तम के भक्त गोस्वामीजी ने मर्यादा रक्षण के भाव का कहीं भी त्याग नहीं किया है।

गोस्वामीजी के ग्रन्थों में कलेवर की दृष्टि से 'रामचरितमानस' के पश्चात् गीतावली का ही (द्वितीय) स्थान है।

११) श्रीकृष्ण-गीतावली :

यह ललित ब्रजभाषा में रचित अत्यन्त ही रसमय और मधुर गीति-काव्य है। इसमें कुल ६१ पद हैं; जिनमें २० बाल लीला के, ३ रूप सौन्दर्य के, ९ विरह के, २७ उद्धव-गोपिका-संवाद या भ्रमर गीत के और २ द्रौपदी-लज्जा-रक्षण के हैं। इसमें बाल-सुलभ चेष्टाओं, स्वभाव और चरित्र का मोहक रूप चित्रित किया गया है। इसके पदों में ऐसा स्वाभाविक, सुन्दर और सजीव भाव-चित्रण है कि लीला-प्रसंग मूर्तिमान हो कर सामने आ जाता है :

मो कहँ झुठेहुँ दोष लगावहिं।
मैया! इन्हहि बानि पर घर की, नाना जुगुति बनावहिं॥ 50

इस ग्रन्थ से यह सिद्ध होता है कि गोस्वामीजी राम-रूप के अनन्योपासक होते हुये भी राम और कृष्ण में अभेद बुद्धि रखते थे और दोनों के ही स्वरूपों का तथा उनकी लीलाओं का वर्णन करने में अपने को कृतकृत्य समझते थे।

यह मुक्तक काव्य है, जिसमें सजीव, मुहावरेदार ब्रजभाषा का प्रयोग हुआ है।

१२) विनय-पत्रिका :

लोकप्रियता की दृष्टि से 'रामचरितमानस' के बाद 'विनय-पत्रिका' को ही द्वितीय

स्थान प्राप्त है। इसमें भक्ति-रस का पूर्ण परिपाक हुआ है। गोस्वामीजी के हृदय में प्रभु राम के महत्त्व एवं अपने लघुत्व का अनुभव होने पर जो-जो भाव-तरंगे उठी हैं, उन्हीं की माला यह विनय-पत्रिका है। दैन्य, विश्वास, आत्म-भर्त्सना, दृढ़ता, हर्ष, गर्व, उपालम्भ, मोह, चिन्ता, विषाद, प्रेम आदि विविध भाव अपने सजीव रूप में इसमें विद्यमान हैं। यह भक्ति-रस के नाना स्वादों से ओतप्रोत है।

कराल कलियुग से उत्पीड़ित गोस्वामीजी ने श्रीराम के दरबार में एक प्रार्थना-पत्र प्रेषित किया था, जिसका नाम उन्होंने विनय-पत्रिका रखा है:-

रामराय! बिनु रावरे मेरे को हितु साँचो?
विनय-पत्रिका दीन की, बापु! आप ही बाँचो॥ [51]

उस समय वे कलि-कुचाल से पीड़ित समस्त मानव-जाति के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत हुये थे। जीव का दैन्य, असामर्थ्य, लघुत्व एवं स्वामी का पुरुषार्थ विलक्षण उद्‌गारों में अभिव्यक्त किया गया है। इसमें भाषा की क्लिष्टता एवं भावों की गंभीरता तो है ही लेकिन सरलता और सरसता का अभाव भी नहीं है। इसकी भाषा ब्रज है, परन्तु इसपर अवधी का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है क्योंकि वह गोस्वामीजी की मातृभाषा थी। यह भक्ति-रस से ओतप्रोत उत्कृष्ट गीतिकाव्य है। अन्त में, श्रीराम अपनी स्वीकृति प्रदान कर देते हैं :

मुदित माथ नावत, बनी तुलसी अनाथ की,
परी रघुनाथ-हाथ सही है। [52]

१३) रामचरितमानस :

रामचरितमानस गोस्वामीजी का सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य है। इसमें राम के सम्पूर्ण जीवन का वर्णन है। इसमें मर्यादा पुरुषोत्तम राम की परब्रह्मता के साथ उनके आदर्श मानवीय चरित्रों का भी प्रतिपादन किया गया है। गोस्वामीजी ने इसकी रचना सं.१६३१ के चैत्रशुक्ल ९ मंगलवार को राम-जन्म के दिन प्रारम्भ की थी तथा इसे उन्होंने दो वर्ष, सात महिने, छब्बीस दिन में पूर्ण कर दिया।

यह सात काण्डों में विभक्त है। इसमें प्रमुखतया चौपाइयों और दोहों का प्रयोग हुआ है। प्राय: चार चौपाइयों पर एक दोहा रखा गया है। कहीं कहीं पर छप्पय का भी प्रयोग हुआ है। इसकी भाषा साहित्यिक अवधि है। इसके प्रत्येक काण्ड का प्रारम्भ संस्कृत के श्लोकों से हुआ है।

इसमें पौराणिक शैली के आधार पर चार कथा-संवाद हैं। इसके चार वक्ता हैं शिव, काकभुशुण्डि, याज्ञवल्क्य तथा तुलसीदास। इसीके अनुरूप चार श्रोता हैं पार्वती, गरुड़, भरद्वाज और सन्त। 'मानस' के चारों घाटों पर राम-कथा होती है। प्रत्येक घाट पर एक वक्ता और एक श्रोता है। इसका घटना संघठन और क्रमिक विकास महाकाव्य का-सा है तथा इसके संवादों की सजीवता, चरित्र का सूक्ष्म-चित्रण, वार्तालाप आदि नाटकीय है।

'मानस' की रचना में यद्यपि तुलसीदासजी ने भ्रमर-वृत्ति से नाना पुराण निगमागम का उपयोग किया है लेकिन 'वाल्मीकि रामायण', 'अध्यात्म रामायण', 'श्रीमद् भागवत–महापुराण', 'भगवद्गीता', 'प्रसन्नराघव नाटक' तथा 'हनुमन्नाटक' से विशेष रूप से भाव ग्रहण किये हैं। इसका प्रमुख रस शान्त है; परन्तु श्रृंगार, वीर, करुण, हास्य, भयानक, वीभत्स, रौद्र आदि रसों का परिपाक भी अनेक स्थलों पर दृष्टव्य है।

रामचरितमानस मानव-जीवन का महाकाव्य है, जिसमें मानव के सुख, दु:ख, करुणा आदि भावनाओं की सफल अभिव्यक्ति हुई है। वस्तुतः इसने सारे मानव-जीवन को ही परिवेष्टित कर लिया है। इसमें भक्ति-रस का प्रवाह अविरल रूप से बहता है, जिसमें अवगाहन कर कोटि-कोटि जन कृतकृत्य हुये हैं। यह विश्व-साहित्य की श्रेष्ठ साहित्यिक कृति है। विश्व-साहित्य में इसकी समता करने वाले ग्रन्थ दुर्लभ हैं।

निष्कर्ष :

तुलसीदासजी महान् भक्त, विचारक, एवं अलौकिक काव्य-शक्ति-सम्पन्न कवि थे। उन्होंने अपनी देव-निर्मित तूलिका से 'रामचरितमानस' जैसे अद्वितीय काव्य-ग्रन्थ की रचना की, जो भारतीय धर्म, दर्शन, साहित्य एवं भक्ति का अमर काव्य है। यह ज्ञान का विशाल भण्डार एवं सामाजिक विचारों का आगार है। इसमें तत्कालीन समाज समाहित है। यह एक पावन मंजूषा है, जिसमें राम-कथा की अमर निधि तो सुरक्षित हुई ही है, साथ ही भारतीय संस्कृति और सभ्यता की मार्मिक व्याख्या भी हुई है। इसकी प्रत्येक चौपाई लालित्य और माधुर्य से ओतप्रोत है।

गोस्वामीजी की 'विनय-पत्रिका' गीति-काव्य की श्रेष्ठ रचना है। इसमें आत्म-निवेदनात्मक गीतों का संकलन है। इसकी भाषा ब्रज है, इस पर अवधी का प्रभाव है। 'कवितावली' उच्च कोटि की यथार्थ परक रचना है, जिसमें तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक परिस्थिति का एवं जीवन के विविध पक्षों का उद्घाटन हुआ है। 'गीतावली' में राम के माधुर्य रूप पर बल दिया गया है। इसमें लोक विश्वास तथा लोक-जीवन की मनोहर झाँकी प्रस्तुत की गई है।

'श्रीकृष्ण गीतावली' की रचना से यह प्रमाणित होता है कि गोस्वामीजी पर कृष्ण-काव्य का प्रभाव है। 'दोहावली' समय-समय पर रचित दोहों का संग्रह है, जिसमें तत्कालीन समाज का चित्रण हुआ है। 'जानकी मंगल' एवं 'पार्वती-मंगल' सरस खण्ड काव्य हैं; जिनकी रचना लोक-रुचि एवं लोकाचार को दृष्टि में रखते हुये की गई है। इनके द्वारा उन्होंने वैवाहिक अवसरों पर गाने योग्य गीत प्रदान किये हैं तथा तत्कालीन समाज में प्रचलित अवाँछित गीतों का परिष्कार किया है।

'वैराग्य संदीपनी' में सन्यास-वृत्ति का चित्रण किया गया है। 'बरवै रामायण' की रचना रहीम के बरवै छन्द के आधार पर की गई है, जिसमें गोस्वामीजी का भक्त-रूप गौण एवं कवि रूप प्रमुख बना हुआ है। 'रामाज्ञा प्रश्न' की रचना मंगल और शकुन विचार के लिये की गई है। 'रामलला नहछू' में लौकिक काम-श्रृंगार, परम्परा एवं लोकजीवन का प्रतिबिम्ब है। तुलसीदास ने अपने यौवन के सहज यथार्थ से अनुप्रेरित होकर 'रामलला नहछू' की रचना की और अपने कृतित्व का समापन 'हनुमान बाहुक' के प्रौढ़ व्यक्तिगत यथार्थ से किया।

गोस्वामीजी की प्रत्येक रचना राम-कथा का संस्पर्श करती है। कथा का जो भाग किसी रचना-विशेष में छूट गया है, उसकी पूर्ति उन्होंने दूसरी रचना के द्वारा कर दी है।

इस प्रकार इन ग्रन्थों से गोस्वामीजी के निष्णात पांडित्य, व्यापक अनुभव, गहन एवं सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि तथा समर्थ अभिव्यंजना शक्ति का परिचय मिलता है। उन्होंने अपने सत्साहित्य द्वारा लोक-आदर्श की स्थापना की, धर्म का उपदेश दिया, जीवन के मार्मिक तथ्यों का दार्शनिक निरूपण किया और जन-मानस के मानस-पटल का परिष्कार किया।

■ □ ■

■ संदर्भ - सूची ■

1. कवितावली / उत्तरकाण्ड / 100
   तुलसीदास
   टीकाकार लाला भगवानदीन
   पृष्ठ 137

2. विनय पत्रिका (हरितोषिणी टीका) / 76 / 1
   सम्पादक - टीकाकार वियोगी हरि
   पृष्ठ 146

3. कवितावली / उत्तरकाण्ड / 13
   तुलसीदास
   पृष्ठ 90

4. बरवै रामायण / उत्तरकाण्ड / 59
   तुलसीदास
   अनुवादक सुदर्शनसिंह
   पृष्ठ 14

5. कवितावली / उत्तरकाण्ड / 57
   तुलसीदास
   टीकाकार लाला भगवानदीन
   पृष्ठ 112

6. हनुमान बाहुक / 29
   गोस्वामी तुलसीदास
   टीकाकार पं. महावीरप्रसाद मालवीय वैद्य 'वीर'
   पृष्ठ 42

7. वही / 40
   पृष्ठ 58

8. रामचरितमानस / बालकाण्ड / 30 / 6
   (सटीक मोटा टाइप)
   तुलसीदास
   टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दार
   पृष्ठ 39

9. कवितावली / उत्तरकाण्ड / 73
तुलसीदास
टीकाकार लाला भगवानदीन
पृष्ठ 121 - 122

10. विनय पत्रिका / 135 / 1
तुलसीदास
टीकाकार डॉ. राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी
पृष्ठ 148

11. रामचरितमानस (सटीक मोटा टाइप) /
बालकाण्ड / 5
तुलसीदास
टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 3

12. वही / बालकाण्ड / 30 क
पृष्ठ 37

13. विनय पत्रिका / 83 / 2
सम्पादक टीकाकार वियोगी हरि
पृष्ठ 154

14. हनुमान बाहुक / 40
तुलसीदास
टीकाकार पं. महावीरप्रसाद मालवीय वैद्य 'वीर'
पृष्ठ 58

15. कवितावली / उत्तरकाण्ड / 167
पृष्ठ 174 - 175

16. कवितावली / उत्तरकाण्ड / 58
तुलसीदास
टीकाकार लाला भगवानदीन
पृष्ठ 112

17. नवधा भक्ति
जयदयाल गोयन्दका
पृष्ठ 44

18. विनय पत्रिका 76 / 3
(हरितोषिणी टीका)
सम्पादक और टीकाकार वियोगी हरि
पृष्ठ 146

19. कवितावली / उत्तरकाण्ड / 100
तुलसीदास
टीकाकार लाला भगवानदीन
पृष्ठ 137

20. वही / उत्तरकाण्ड / 109
पृष्ठ 141

21. वैराग्य - संदीपनी 3, 4
तुलसीदास
अनुवादक हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 1

22. रामचरितमानस / उत्तरकाण्ड 119 (क)
(सटीक मोटा टाइप)
तुलसीदास
टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 1043

23. नारद - भक्ति - सूत्र / 10
अनुवादक हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 5

24. वैराग्य संदीपनी / 15
तुलसीदास
अनुवादक हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 4

25. विनय पत्रिका (हरितोषिणी टीका) 101 / 1
सम्पादक टीकाकार वियोगी हरि
पृष्ठ 174

26. रामचरित मानस / किष्किन्धाकाण्ड / 2 / 4
(सटीक मोटा टाइप)
तुलसीदास
टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 682

27. विनय पत्रिका 1 / 4
गोस्वामी तुलसीदास
सम्पादक टीकाकार वियोगी हरि
पृष्ठ 37

28. विनय पत्रिका
तुलसीदास
सम्पादक टीकाकार वियोगी हरि
पृष्ठ 141

29. रामचरित मानस / बालकाण्ड / 8 / 4
(सटीक मोटा टाइप)
तुलसीदास
टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 14

30. वही / बालकाण्ड / 8 / 6
पृष्ठ 14

31. वही / बालकाण्ड / 11 / 5
पृष्ठ 18

32. विनय पत्रिका / 90 / 1
तुलसीदास
सम्पादक टीकाकार वियोगी हरि
पृष्ठ 161

33. रामचरितमानस / बालकाण्ड / 7
(सटीक मोटा टाइप)
तुलसीदास
टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 2

34. वही / बालकाण्ड / 13 / 5
पृष्ठ 20

35. वही / बालकाण्ड / 10 / 4
पृष्ठ 16

36. वही / लंकाकाण्ड / 1 / 4
पृष्ठ 776

37. वही / लंकाकाण्ड / 2
पृष्ठ 776

38. हिन्दी साहित्य का इतिहास
राजनाथ शर्मा
पृष्ठ 87

39. वैराग्य संदीपनी / 38
पृष्ठ 10

40. वही / 41
पृष्ठ 11

41. बरवै रामायण / उत्तरकाण्ड / 59
तुलसीदास
अनुवादक सुदर्शनसिंह
पृष्ठ 14

42. पार्वती - मंगल / 16
तुलसीदास
सम्पादक हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 32

43. जानकी - मंगल / 160
तुलसीदास
सम्पादक हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 38

44. दोहावली / 564
तुलसीदास
अनुवादक हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 193

45. कवितावली / उत्तरकाण्ड / 97
तुलसीदास
टीकाकार लाला भगवानदीन
पृष्ठ 135

46. वही / उत्तरकाण्ड / 73
पृष्ठ 122

47. हनुमानबाहुक / 41
तुलसीदास
टीकाकार पं. महावीरप्रसाद वैद्य 'वीर'
पृष्ठ 60

48. गीतावली / बालकाण्ड / 2
तुलसीदास
अनुवादक मुनिलाल
पृष्ठ 19

49. वही / उत्तरकाण्ड / 18
पृष्ठ 353

50. श्रीकृष्ण - गीतावली / 4 / 1
तुलसीदास
अनुवादक हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 11

51. विनय - पत्रिका / 277 / 1-3
(हरितोषिणी टीका)
तुलसीदास
सम्पादक - टीकाकार वियोगी हरि
पृष्ठ 422

52. वही / 279 / 3
पृष्ठ 424

■ □ ■